हिरनी

हिन्दी ADDA

चंद्रकिरण सौनरेक्सा

हिरनी

काली इटैलियन का बारीक लाल गोटेवाला चूड़ीदार पायजामा और हरे फूलोंवाला गुलाबी लंबा कुर्ता वह पहने हुई थी। गोटलगी कुसुंभी (लाल) रंग की ओढ़नी के दोनों छोर बड़ी लापरवाही से कंधे के पीछे पड़े थे, जिससे कुर्ते के ढीलेपन में उसकी चौड़ी छाती और उभरे हुए उरोजों की पुष्ट गोलाई झलक रही थी। अपनी लंबी मजबूत मांसल कलाई से मूसली उठाए वह दबादब हल्दी कूट रही थी। कलाई में फँसी मोटी

हरी चूड़ियाँ और चाँदी के कड़े और पछेलियाँ बार-बार झनक रही थीं। उन्हीं की ताल पर वह गा रही थी -

'हुलर-हुलर दूध गेरे मेरी गाय... आज मेरा मुन्नीलाल जीवेगा कि नाय।'

बड़ा लोच था उसके स्वर में। इस गवाँरू गीत की वह पंक्ति उस तीखी दुपहरी में भी कानों में मिश्री की बूँदों के समान पड़ रही थी। कुछ देर मैं छज्जे की आड़ में खड़ी सुनती रही। न उसने कूटना बंद किया और न वह गीत की पंक्ति 'हुलर-हुलर...।'

धूप में पैर बहुत जलने लगे, तो मैं लौटने को ही थी कि पीछे से भाभी ने आ कर जोर से कहा, 'खुदैजा, अरी देख, यह रही हमारी बीबीजी। चोरी-चोरी तेरा गीत सुन रही थीं।'

उसने तुरंत मूसली छोड़ कर ऊपर नजर उठाई और हँस पड़ी। फिर हाथ माथे पर रख कर बोली - 'सलाम बीबीजी! बड़े भाग जो आज तेरे दरसन हो गए।'

मैं झेंप गई। पिछवाड़ेवाले मकान में नए पड़ोसियों को आए पंद्रह दिन हो गए होंगे। भाभी से कई बार खुदैजा का जिक्र सुन कर भी और यह जान कर भी कि मुझसे मिलना-बोलना चाहती है, मैं कभी उससे परिचय करने न आई थी। मैं सोचती थी, उस ठेठ गँवार छोकरी से मैं किस विषय पर और क्या बातें करूँगी? अपनी झेंप मिटाने को मैं जल्दी से बोली - 'भाभी तुम्हारा गला तो बड़ा मीठा है; अपना गीत जरा फिर तो गाओ!'

'के, बीबी जी, मेरा गला! भला तुम तो बाजे पर गानेवाली ठहरीं, मेरा गीत भावेगा?' उसने उत्तर दिया। उसके बोलने में तकल्लुफ नहीं, हार्दिकता थी।

'नहीं नहीं, तुम गाओ... पूरा गाओ,' मैंने जोर दिया।

बिना दोबारा इसरार कराए वह गाने लगी, उसी धीमी मीठी आवाज में -

'हुलर हुलर दूध गेरे मेरी गाय।

आज मेरा मुन्नीलाल जीवेगा कि नाय।

इस सासू की नजर बुरी है, मेरी माय।

आज मेरा मुन्नीलाल जीवेगा कि नाय।'

मुझे लगा, कि वह स्वर दबा कर गा रही है।

'भाभी, पूरा गला खोल कर गाओ,' मैंने अनुरोध किया।

उसने कुटी हल्दी को छलनी में उलट कर नीचे आँगन की ओर उँगली दिखा कर कहा - 'फुफ्फी लड़ेगी!'

भाभी ने कहा, 'मरने दे फुफ्फी को। बीबीजी, खुदैजा नाचती भी बहुत अच्छा है। ओ खुदैजा, जरा नाच ते सही।'

वह थोड़ा शरमा गई। ओढ़नी मुँह में दबा कर हँसने लगी।

'अच्छा भाभी! तुम्हें नाचना भी आता है। तब तो जरूर नाच कर दिखाओ,' भाभी की शह पा कर मैंने भी कहा।

परंतु वह नाचेगी, ऐसे मुझे जरा भी आशा नहीं थीं। भला शहरों में जब हम पढ़ी-लिखी लड़कियों के आगे कोई बार-बार हारमोनियम-तबला रखता है, कई-कई बार इसरार करता है, तब पहले तो हम लोग नजाकत से गाना न आने की दलीलें पेश करती हैं, इस पर भी जब वे लोग प्रमाण देते हैं कि आपने अमुक के जन्मदिवस पर और फलाँ की शादी में अमुक गाना गाया था, तब गला खराब होने का बहाना किया जाता है। जब देखते हैं कि किसी तरह पीछा नहीं छूटेगा, तब कहीं खाँस-खखार कर एक आधी गत बजाई और बाजा परे सरका कर कहा, 'देखिए, कहीं आता भी है। आप फिजूल ही पीछे पड़े हुए हैं।' अरे बस यों हमारा गाना खत्म हो जाता है।

'खुदैजा**,** नाच दे न। अच्छा बीबीजी की बात भी नहीं माननी**?'** भाभी ने कहा**,** 'ले**,** मैं तो जाती हूँ।'

वह हड़बड़ा कर उठ बैठी **-** 'न न, जावे मत। तुझे अल्ला पाक की कसम सरसुती। ले, मैं नाच दूँगी, पर बीबीजी के पसंद आवेगा मेरा नाच?'

उसके पैर के कड़े-छड़े यद्दपि उसकी मांसल पिंडली और टखनों से चिपटे हुए थे, फिर भी गिनती में कई होने से आपस में खनक कर झनक उठे। ओढ़नी सिर पर ले, तनिक-सा घूँघट निकाल कर वह खड़ी हो गई। फिर मुझे देख कर हँस पड़ी, बोली, 'नाचूँ?'

'हाँ, हाँ!'

'के गाऊँ सरसुती।'

'कुछ भी गा ले। वही गीत गा - 'लटक रहती बबुआ'.....'

उसने गाया -

'लटक रहती बबुआ तोरे बँगले में,

जो मैं होती बागों की कोयल,

कूक रहती, बबुआ तोरे बँगले में।'

किसी शास्त्र के अंतर्गत उसका नाच नहीं था। न कत्थक, न कथकली, न मनीपुरी, न उड़ीसी और न भरतनाट्यम्! बाहुओं के संचालन में कोई गहराई भी न थी, पर उस सीधेपन में एक लय थी, गति थी... तेज और प्रवाहमयी... जीवन से भरपूर। अस्थायी के मोड़ पर नाचती हुई, वह दो फुट ऊपर उछल जाती और फिर धरती पर पाँव लगते ही थिरकने लगता, क्या मजाल, जो जरा पंजा रुकता हो। साढ़े पाँच फुट लंबी भरी देह की उस युवती का गठन एकदम गिन्नी-गोल्ड की डली जैसा था - लाली लिए हुए रंग का ऐसा सोना, जिसमें कयामत का लोच हो।

गीत पूरा हुआ और वह नाच बंद कर लंबी-लंबी साँस लेने लगी।

'शाबाश, भाभी!' मैंने उत्साह से कहा, 'सचमुच बहुत अच्छा नाचती हो।'

'सच्ची! तुम्हें मेरा नाच अच्छा लगा!' उसकी बिल्लौरी शीशे-सी आँखों में उत्साह छलक पड़ा। भोलेपन से उसने पूछा - 'और नाचूँ?'

'हाँ-हाँ!' छज्जे की आड़ में भी मेरे पाँव जले जा रहे थे, फिर भी नीचे जाने को मन न होता था।

उसने दुपट्टे से मुँह का पसीना पोंछा और पैर से ठुमका लिया ही था कि नीचे से किसी ने धीमी पर तीखी क्रोधभरी आवाज में कहा, 'ओ घोड़ी! कूदना बंद कर दे! शफीक का अब्बा आ गया है।'

खुदैजा के पाँव रुक गए, जैसे किसी तेज चाल से घूमते हुए लट्टू पर कोई अचानक हाथ रख दे। मुँह पर उदासी की छाया-सी आ गई, किन्तु भाभी से दृष्टि मिलते ही वह मुस्करा पड़ी और बोली, 'देखा मचने लगा न शोर! फुफ्फी का बस चले, तो मुझे बकस में बंद करके रक्खे।' फिर होंठों में ही किसी गीत की कड़ी गुनगुनाती हुई वह ओढ़नी के पल्ले से मुँह पर हवा करने लगी।

नीचे से सीढ़ियाँ चढ़ती हुई उसकी सास कहती आ रही थी, 'खुदैजा, तूने ते सारी हया-शरम घोल कर पी डाली! अरी, तू क्या नटनी की धी है? कंजरियों की तरह हर वक्त गाती रहती है, बेहया कहीं की... !'

खुदैजा चमक पड़ी। गुस्से से उसके चेहरे का गेहुँआ रंग एकदम गहरा सिंदूरी हो उठा।

'बस, फुफ्फी, अपना जबान बंद रख! नटनी होगी तू, तेरी धी!! कंजरी-वंजरी बनाएगी, तो देख ले मैं अपनी-तेरी जान एक कर दूँगी...!

'या परवरदिगार,' फूफी ऊपर आ चुकी थी। आसमान की तरफ दोनों हाथ उठा कर बोली, 'अल्ला का कहर पड़े तेरे ऊपर...! खुदा करे, तेरे भाई की मैयत निकले! तूने हमारे खानदान की नाक काट ली। मेरे शफीक के लिए तू ही धरी थी। हाय अल्लाह, कैसी जुबान-दराज है। जी चाहता है जुबान खींच लूँ इसकी... '

और फूफी तब नाक के स्वर में रो-रो कर अल्लाह को पुकारने लगी। मैं भाभी का हाथ पकड़ कर उन्हें खींचती हुई नीचे ले आई। तिरस्कार से मैंने कहा, 'यही है तुम्हारी सहेली!'

भाभी ने चिढ़ कर कहा, 'सहेली का क्या कसूर बीबीजी? तुम्हें ही अगर कोई जेलखाने में बंद करके बाप-भाइयों को गालियाँ दे, तो कहाँ तक सुनोगी? वह तो रोहतक के किसी ठेठ गाँव की लड़की है। शहरों के, मुँह में राम बगल में छुरीवाली सभ्यता तो जानती नहीं। उसे तुम 'तू' कहोगी, तो 'तू' सुनोगी भी! वैसे दिल की इतनी अच्छी है कि जरा-सा किसी का दुख नहीं देख सकती। गरूर-मिजाज तो वह जानती तक नहीं।' - और भाभी कुछ अप्रसन्न-सी हो कर बाहर चली गई।

दूसरे दिन सिर धो कर बाल सुखाने मैं पिछवाड़े के छज्जे पर गई। खुदैजा को देखने का लोभ भी इसका एक कारण था। वह अपनी देहरी पर बैठी कुछ सी रही थी, साथ ही कोई गीत भी गुनगुनाती जा रही थी। मैंने हल्के से खाँसा। आहट पा कर सिर उसने ऊँचा किया। मुझे देखते ही उसका मुँह प्रसन्नता से गुलाब की भाँति खिल उठा। फौरन हाथ माथे पर रख कर बोली, 'सलाम बीबीजी! राजी तो हो?'

'सलाम!' मैंने जवाब दे कर पूछा, 'क्या सी रही हो?'

'के बताऊँ बीबीजी! बिचारी फुफ्फी के हाथों में तो खुजली हो रही है। अल्लाह मारा ऐसा रोग है कि आदमी अपने हाथ से खा भी न सके। उसका पैजामा फट गया है, उसी में टाँके लगा रही हूँ।'

मुझे कल की घटना याद हो आई। धीरे से पूछा, 'मेल हो गया सास से?'

खुदैजा हँसी, बोली, 'सास-बहू की के लड़ाई बीबीजी! पर मने कोई गाली दे हैं, तो बस म्हैं तो ऊपर से तले तक बल उठूँ हूँ।'

'पर भाभी, इन लोगों से तुम्हारी पटती नहीं। तुम्हारे बाप ने तुम्हें क्यों शहर में ब्याह दिया?'

खुदैजा का स्वर कुछ बोझिल हो गया, बोली, 'बीबीजी, मेरा बाप तो गरीब आदमी है। अब्बा (ससुर) ने मने कहीं गाँव में देख ली थी, सो मेरे चाचा से माँगी। वो सीधा आदमी, बातों में आ गया, उसे के खबर थी कि शहरों में घर जेलखानों जैसे होवै हैं।'

'तुम्हारे गाँव में क्या परदा नहीं होता था?,' मैंने पूछा।

'बीबीजी, परदा वहाँ करे, जहाँ पाप बसता हो। गाँव में सब भैन-बेटियाँ समझे हैं। परदा करें तो फिर खेत-क्यार का काम कैसे चले?'

'तभी तुम्हें इतने गीत याद हैं,' मैंने मजाक किया, 'घर-घर गाती हुई घूमती होगी।'

और यह सुनते ही किसी सुखद स्मृति से पुलक उठी, 'बीबीजी, सावन के महीने में हम सब छोरियाँ नीम में झूला डालतीं, आधी रात तक पेंगें बढ़ातीं और गाती-नाचती। ब्याह-शादी में रात-रात भर चाँदनी में नाच-गाना होता, बहू-बेटी गातीं और बड़े-बूढ़े चौपाल में सुना करते।'

'बहुएँ भी परदा नहीं करती थीं?'

'अरे के परदा!' उसने ओढ़नी से मुँह ढँक कर कहा, 'ऐसे, बस परदा हो गया... कोई बोल-चाल का परदा होता है? घूँघट मार लिया और गाती रहीं।'

'अच्छा!' मैं चुप हो गई। सच है, हेड कांसटेबिल के बेटे की बहू पर बड़ा तरस आ रहा था। बेचारी बड़ी बुरी फँसी थी।

'बीबीजी, एक गीत गाऊँ?'

'गाओ,' मैंने खुश हो कर कहा।

और सब कुछ भूल, अपने स्वर को पंचम तक पहुँचा कर उसने गाया -

'कोठे ऊपर कोठरी, जिसमें तपे तनूर,

गिन-गिन लाऊँ रोटियाँ मेरा खानेवाला दूर री,

मेरी बाली का बाला जोबनवा बटवा गूँथन दे... !'

'अरी खुदैजा,' नीचे से उसकी सास ने पुकारा, 'कमबख्त! आने दे तेरे यार को, उसी से तुझे ठीक कराऊँगी... कल शफीक दौरे से लौट आवे, तब तेरी मरम्मत कराऊँगी।'

और फिर दोनों सास-बहुओं में ठन गई।

दूसरे दिन मैं छत पर न गई। परंतु तीसरे पहर भाभी ने जब नीचे आ कर बताया कि खुदैजा छत पर बैठी रो रही है, उसके पति ने रात उसे लकड़ी से मारा था, तो मैं अपने को रोक न सकी। ऊपर जा कर देखा, खुदैजा छत पर खपरैल तले खटोले पर पड़ी रो रही थी।

'भाभी!' मैंने धीरे से उसे पुकारा।

वह चमक कर उठ बैठी। मुझे देख कर अपनी आँसू भरी आँखों से ही हँस पड़ी, 'बड़ी उमर बीबीजी, मैं तो तुमे ही याद कर रही थी, सलाम।'

सलाम का उत्तर दे, मैंने पूछा, 'रात क्या गुजरी?'

'गुजरी के!' उसने तपे हुए स्वर में कहा, 'तेरा भाई आया था। फूफी ने जाने के सिखा दिया। आते ही उसने लाठी पकड़ ली,' कहते-कहते उसका स्वर ठंडा हो गया, हँसी की पुट भी आ गई, 'बीबीजी, बोल्ला न चाल्ला, अल्लाह कसम, दो लकड़ी जमा दी,' और उसने अपनी पीठ दिखाई, जो रीढ़ के पास छिल गई थी।

सहानुभूति से मैंने कहा, 'राम-राम, बड़ा कसाई है!'

हँस पड़ी खुदैजा। बोली, 'बीबीजी, के बताऊँ... मने दुनिया की शरम खा गई कि लोग कहेंगे कि खसम को मारा, नहीं तो लकड़ी समेत टाँगों में ऐसे दबा लेती... चूँ करके रह जाता। सारी सिपाहीगीरी लिकड़ जाती,' और उसने अपने पुष्ट हाथों से मरोड़ देने का अभिनय किया।

खुदैजा की बातें छोड़ कर जाने की इच्छा न होती थी। जिस निष्कपट सरल भाव से वह बातें कर रही थी, उनके प्रभाव से मन-मस्तिष्क पर एक नशा-सा छा जाता था। आधी रात के सन्नाटे में भी उसके गले की मिठास कानों में गूँजती थी। काश, उसे अगर कुछ दिन संगीत सिखाया जाता। अचानक मुझे ध्यान आया कि कहीं मुझसे बातें करने में वह गाना न सुनाने लगे, तो फिर उस पर मार पड़े। इसलिए 'अभी आती हूँ,' कह कर मैं झटपट नीचे उतर गई।

आते-आते सुना कि वह पुकार कर कह रही थी, 'अल्लाह की कसम बीबीजी, जल्दी आइओ! जरा अपना बाजा भी उठा लाइयो। मैं भी देखूँ, कैसे बजे हैं।'

कई दिनों से मेरी भाभी बीमार थीं। और छोटी भतीजी कुसुम भी अचानक सर्दी खा गई और तेज बुखार हो गया। पास-पड़ोस से स्त्रियाँ उन्हें देखने-पूछने आती रहती थीं। घर का काम सब मेरे ऊपर था। इसी से सैर करने जाना तो दूर, छत पर जाना भी नहीं हुआ। खुदैजा ने कई बार अपने नन्हें देवर को भेज कर बुलवाया कि मैं तनिक देर को छत पर हो जाऊँ, पर इच्छा होने पर भी न जा सकी।

चिराग जले उसकी सास बुरका ओढ़ कर छोटे लड़के को साथ ले कर आई। लड़के द्वारा पहले पुछवा लिया था कि घर में कोई मर्द तो नहीं, तब बेचारी कमरे में घुसी।

'कैसी तबीयत है, बहू?'

'अब तो जरा ठीक हूँ,' भाभी ने कहा, 'आइए - बीबीजी, जरा कुर्सी दे जाना।'

'सच मानो बहू, खुदैजा पर तो तुमने जादू कर दिया है।' फूफी कुर्सी पर बैठ कर बोलीं, 'जब से सुना है, मछली-सी तड़फ रही है। वह मुर्दो तो बुरका उठाए चली आ रही थी, मुश्किलों रोका... तुम जानों बहू, हम लोगों में हिंदुओं की तरह चादर बगल में दबाई और घर-घर घूमने चल दिए वाली बात तो होती नहीं। जो ऐसा करती हैं, वे बदनाम हो जाती है, खैर, तुमसे तो अपनों जैसा मेल हो गया है। रात को लाऊँगी उसे भी।'

'फूफीजी, जो बड़े-बड़े अमीर-उमरा होते हैं, उनकी लड़कियाँ तो हमारी ही तरह बाहर आती-जाती हैं।' - भाभी दबे स्वर में बोलीं।

'तुफ उन लोगों पर! वह मुसलमाननी क्या जिसके पैर का नाखून भी किसी गैर मर्द ने देख लिया? शहरी तहजीब-कायदा तो यही है, नीच कौमों और गँवारों की बात छोड़ दो।'

आगे बहस फिजूल थी। भाभी ने दूसरी बातें छेड़ दीं।

रात को दस बजे खुदैजा आई। साथ में फूफी, दोनों देवर और ननदें भी थीं। आते ही भाभी के गले से लिपट गई, फिर मेरे से। कुसुम को तो छोड़ती न थी, 'अरे मेरे मुन्नीलाल, तुझे किस सौकण (सौत) की नजर लग गई! मेरे कुलसुम...। क्यों ऐ सरसुती, तूने छोरी भी बीमार कर दी?'

'अरी खुदैजा! धीरे बोल।' फूफी दबे स्वर में गुर्राई, 'कुलसुम का अब्बा बैठक में सो रहा है।

'के फूफ्की!' खुदैजा ने झनक कर कहा, 'तेरी धीरे-धीरे ने तो जान खा डाली। अब के हाँड़ी में मुँह करके बोलूँ?'

'तोबा!' फूफी खून का-सा घूँट पी कर रह गईं।

खुदैजा को पढ़ने का शौक सवार हुआ था। उर्दू का कायदा मँगा कर देवर से पढ़ने लगी। छत पर होती, तो मुझे बुलवा कर पूछती। परंतु अक्षर उसे याद न रहते। अलिफ बे की अपेक्षा गाने की तर्जें उसे जल्दी याद हो जाती थीं। फूफी अगर इत्तफाक से अपने किस रिश्तेदार के यहाँ चली जाती, तो फिर छत पर गाने-नाचने का तूफान उठा देती; चाहे शाम को लड़ाई-झगड़े और मार-पीट की ही नौबत क्यों न आवे।

वर्णमाला उसे याद नहीं हुई। इतनी दूर से पढ़ाई हो भी न सकती थी। फिर उसे घर का काफी काम भी रहता, क्योंकि उसे मोटी-ताजी देख कर फूफी और उनकी नाजुक शहराती लड़कियाँ तो कुछ करके न देती थीं। और मुझे अपनी पढ़ाई-लिखाई और गृहस्थी का काम रहता था। फिर मैं तो कुछ सामाजिक और राजनैतिक कार्यों में भी हिस्सा लेती थी। शहर में एक जुलूस निकलनेवाला था। मैं जा रही थी।

'बीबीजी, कहाँ चली?' उसने छत से पुकारा।

'जुलूस में!' मैं जल्दी से बोली, 'आज बड़ा भारी जुलूस निकलेगा।'

'हाय, बीबीजी! मैं क्यों कर निकलूँ इस जेल खाने से।' उसके स्वर में तड़प थी।

'अच्छा सलाम!' मैं हाथ उठा कर चल पड़ी। पर मन में खुदैजा का वह स्वर कचोटें भर रहा था, 'मैं क्यों कर निकलूँ इस जेलखाने से... !'

दस बजे जुलूस और मीटिंग समाप्त होने पर मैं घर लौटी, तो सुना पिछवाड़े बड़ा गुलगपाड़ा मच रहा था। भाभी ने द्वार खोल कर कहा, 'बीबीजी, आज न जाने खुदैजा पर क्या बीतेगी। फूफी अपने मामू के यहाँ गई थी। वह मेरे नन्हें को चार पैसों का लालच दे कर उसके साथ चुपके से जुलूस देखने चली गई।'

और भाभी घबराहट में ज्यादा कह न पाई।

मैं भी डर गई। हम दोनों छत पर कान लगाए सुनती रहीं। उसके ससुर बार-बार कह रहे थे, 'आज मेरी पगड़ी इसने पैरों तले रौंद डाली... इस पड़ौस में आ कर यह एकदम बिगड़ गई है। कल ही यह मकान छोड़ दूँगा। इस बार तो दोहरी डेवढ़ी का मकान लेना पड़ेगा।'

दो दिन बाद पिछवाड़े का मकान खाली हो गया। खुदैजा रो-रो कर बिदा हुई हमसे। पालकी में बैठी भी ऊँचे स्वर में रो रही थी।

खुदैजा की कोई खबर न लगी। चार-पाँच साल निकल गए। अब मेरे भी एक नन्हीं बच्ची थी। मैं माँ थी। घूमना-फिरना कम हो गया था। बंधनवश नहीं, यही गृहस्थी और बच्ची की देख-भाल की वजह से। फिर भी, इस बार थोड़ी फुरसत निकाल कर देहली घूमने आई थी। लाल किले भी गई। शाही हमाम में कुछ बुरकेवालियाँ दिखाई दीं।

'बीबीजी!' अकस्मात् धीरे से उनमें से एक ने आ कर मेरा कंधा छुआ।

मैंने आश्चर्य से देखा, खुदैजा थी! - लंबी, पीली, गालों की हड्डियाँ उभरी हुई, आँखों में गड्ढे पड़े हुए - खुदैजा ही थी।

'अरे भाभी तुम, वाह... !' मैंने उसका हाथ पकड़ लिया।

'राजी रहीं बीबीजी! अच्छा, शादी हो गई? मुबारिक।' उसने फुसफुसा कर कहा।

और सिर्फ पहचान करने-कराने को उसने जो बुरका उठा। दिया था उसे फिर डाल लिया, हालाँकि उस समय वहाँ कोई मर्द न था। खुदैजा के इस व्यवहार पर मुझे आश्चर्य हुआ। स्वच्छंद हिरनी अब खूँटे से बँधी बकरी थी।

'वाह, अब तुम एकदम बंदगोभी हो गई, भाभी!'

'हमेशा ही बेवकूफ थोड़ी ही बनी रहूँगी,' उसने धीमे से उत्तर दिया, 'अब तो अक्ल आ गई है।'

'अच्छा, अक्ल आ गई है? अब तो बड़ी उर्दूदाँ बन गई हो। हमें तो भई नहीं आई अक्ल। उसी तरह बेलगाम घूमती हूँ....।'

उसने जाली में से एक बार देखा और पलकें झुका लीं। उसकी साथिनें बाहर पहुँच चुकी थीं। नन्हें ने जो अब बारह-तेरह साल का हो गया था, नकीब की तरह पुकारा - 'भाभी!'

और खुदैजा उम्रकैदी की तरह मुड़-मुड़ कर पीछे देखती हुई चली गई।